

होरा ज्योतिष में ग्रहों के आधिपत्य और मानव ऊर्जा चक्र का अंतर्संबंध: एक विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण

Parhlad Singh Ahluwalia, Dr. Bhim Rao Ambedkar Law University, Jaipur, Rajasthan

सार (Abstract)

भारतीय ज्योतिष परम्परा में होरा शास्त्र ग्रहों को नवग्रह के रूप में प्रतिष्ठित करता है, जिनमें से प्रत्येक ग्रह को विशिष्ट भाव, राशि और गुणों का “आधिपत्य” (स्वामित्व) प्राप्त होता है। समानान्तर रूप से, योग एवं तंत्र परम्परा शरीर के भीतर सात प्रमुख ऊर्जा-केन्द्रों अर्थात् चक्रों की अवधारणा प्रस्तुत करती है। लोकप्रिय एवं अर्ध-लोकप्रिय साहित्य में प्रायः यह दावा किया जाता है कि प्रत्येक ग्रह किसी विशिष्ट चक्र का “शासक” है और ग्रह-दशा का प्रभाव संबंधित चक्र की सक्रियता अथवा अवरोध के रूप में प्रकट होता है। प्रस्तुत शोध-पत्र इस दावे की उत्पत्ति, शास्त्रीय आधार, और वर्तमान वैज्ञानिक साहित्य के आलोक में समालोचनात्मक समीक्षा करता है। अध्ययन की पद्धति साहित्य-समीक्षा (narrative-cum-systematic) है, जिसमें शास्त्रीय संस्कृत स्रोत, आधुनिक ज्योतिषीय व्याख्याएँ, योग-विज्ञान संबंधी अकादमिक शोध, तथा ज्योतिष की वैज्ञानिक परीक्षा संबंधी अध्ययन सम्मिलित किए गए हैं। परिणाम दर्शाते हैं कि जहाँ चक्र-प्रणाली का स्नायु-अंतःसावी तंत्र (neuro-endocrine system) के साथ एक रूपकात्मक एवं आंशिक शारीरिक समरूपता (anatomical correspondence) स्थापित करने के प्रयास आधुनिक योग-चिकित्सा साहित्य में हुए हैं, वहीं ग्रह-चक्र पत्राचार की अवधारणा का कोई प्रत्यक्ष शास्त्रीय प्रमाण बृहत्पराशर होराशास्त्र जैसे मूल ग्रंथों में उपलब्ध नहीं है — यह अवधारणा बीसवीं शताब्दी के पश्चात्पूर्वी (post-20th-century) समन्वयवादी (syncretic) ज्योतिष-योग साहित्य में विकसित हुई प्रतीत होती है। नियंत्रित वैज्ञानिक परीक्षणों (यथा कार्लसन का द्वि-अंध परीक्षण) में ज्योतिषीय भविष्यकथन की सांख्यिकीय वैधता सिद्ध नहीं हो सकी है, जबकि योग-अभ्यास के स्वायत्त तंत्रिका तंत्र पर प्रभाव हेतु नियंत्रित साक्ष्य उपलब्ध हैं। अतः यह शोध-पत्र प्रस्तावित करता है कि ग्रह-चक्र अंतर्संबंध को एक सांस्कृतिक-प्रतीकात्मक संश्लेषण (cultural-symbolic synthesis) के रूप में समझा जाना चाहिए, न कि एक अनुभवसिद्ध (empirically verified) वैज्ञानिक तथ्य के रूप में।

मुख्य शब्द (Keywords): होरा ज्योतिष, ग्रहाधिपत्य, चक्र, ऊर्जा शरीर, कुण्डलिनी, स्वायत्त तंत्रिका तंत्र, आलोचनात्मक विश्लेषण

1. प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान-परम्परा में दो समांतर किन्तु भिन्न उद्गम वाली प्रणालियाँ दीर्घकाल से प्रचलित रही हैं — ज्योतिष शास्त्र और योग-तंत्र शास्त्र। ज्योतिष शास्त्र, विशेषतः होरा शास्त्र, आकाशीय पिण्डों (ग्रहों) की स्थिति एवं गति के आधार पर मानव जीवन की घटनाओं का विश्लेषण करने का प्रयास करता है। महर्षि पराशर द्वारा प्रतिपादित बृहत्पराशर होराशास्त्र में प्रत्येक ग्रह को विशिष्ट राशियों, भावों और कारकत्वों (significations) का स्वामी निरूपित किया गया है [1,2]। दूसरी ओर, योग एवं तंत्र परम्परा — विशेषतः हठयोग एवं कुण्डलिनी योग — सूक्ष्म शरीर (सूक्ष्म शरीर/लिंग शरीर) के भीतर सात चक्रों: मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार की अवधारणा प्रस्तुत करती है, जो प्राण-ऊर्जा के केन्द्र माने जाते हैं [4,6,8]।

वर्तमान लोकप्रिय आध्यात्मिक साहित्य, विशेषतः पश्चिमी “न्यू एज” (New Age) एवं भारतीय समन्वयवादी साहित्य में, यह प्रतिपादित किया जाता है कि प्रत्येक नवग्रह किसी विशिष्ट चक्र का “अधिपति” है — जैसे सूर्य को अनाहत चक्र का, शनि को मूलाधार चक्र का, और गुरु (बृहस्पति) को विशुद्ध अथवा सहस्रार चक्र का शासक बताया जाता है। यह अंतर्संबंध इतना व्यापक रूप से प्रचारित हो चुका है कि अनेक ज्योतिष-परामर्श एवं वैकल्पिक चिकित्सा मंचों पर इसे एक “सिद्ध तथ्य” के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

प्रश्न यह उठता है — क्या यह ग्रह-चक्र पत्राचार वास्तव में प्राचीन शास्त्रीय परम्परा का अंग है, अथवा यह आधुनिक काल में विकसित एक समन्वयवादी (syncretic) संरचना है? और क्या इस अवधारणा का कोई शरीर-क्रियात्मक (physiological) अथवा

अनुभवसिद्ध आधार विद्यमान है, या यह पूर्णतः प्रतीकात्मक एवं रूपकात्मक स्तर पर कार्य करती है? प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य इन्हीं प्रश्नों का “विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण” (Analytical Reality Exposing) की पद्धति से परीक्षण करना है — अर्थात् दावे को न तो अंध-श्रद्धा से स्वीकार करना है, न ही पूर्वाग्रहवश अस्वीकार करना है, अपितु शास्त्रीय स्रोतों, तुलनात्मक साहित्य, एवं आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान के त्रिविध कसौटी पर उसे परखना है।

भारतीय चिंतन-परम्परा में “शरीर” की अवधारणा कभी भी शुद्ध रूप से स्थूल-भौतिक (gross-physical) नहीं रही। सांख्य-दर्शन में स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर एवं कारण शरीर — इन तीन कोशों की परिकल्पना प्राप्त होती है, और तंत्र-परम्परा इसी सूक्ष्म शरीर के भीतर नाडी-चक्र-कुण्डलिनी के जटिल जाल की कल्पना करती है। दूसरी ओर, ज्योतिष शास्त्र आकाश को “बृहत् शरीर” (macrocosm) तथा मानव को “लघु शरीर” (microcosm) मानते हुए “यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे” (जैसा पिण्ड में वैसा ब्रह्माण्ड में) के सिद्धांत पर आधारित है। यह दोनों ही परम्पराएँ — सूक्ष्म शरीर का चक्र-मानचित्र, तथा बृहत् ब्रह्माण्ड का ग्रह-मानचित्र — एक साझा दार्शनिक अधिष्ठान (पिण्ड-ब्रह्माण्ड साम्य सिद्धांत) पर खड़ी प्रतीत होती हैं। यही कारण है कि समकालीन आध्यात्मिक बाजार (spiritual marketplace) में दोनों को परस्पर जोड़ने का सहज वैचारिक आकर्षण उत्पन्न होता है।

तथापि, वैचारिक आकर्षण तथा शास्त्रीय/अनुभवसिद्ध प्रामाणिकता — दोनों भिन्न कसौटियाँ हैं। एक अवधारणा “आकर्षक” अथवा “अर्थपूर्ण” प्रतीत होने मात्र से वह ऐतिहासिक रूप से “प्राचीन” अथवा वैज्ञानिक रूप से “सत्यापित” सिद्ध नहीं हो जाती। आधुनिक अकादमिक शोध-पद्धति की यही माँग है कि प्रत्येक दावे को उसके स्रोत, उसकी ऐतिहासिकता, तथा उसकी सत्यापन-क्षमता — तीनों कसौटियों पर पृथक्-पृथक् परखा जाए। प्रस्तुत शोध-पत्र ठीक इसी पद्धति का अनुसरण करते हुए ग्रह-चक्र अंतर्संबंध के दावे की परतें खोलने का प्रयास करता है, ताकि पाठक एक सुविचारित, तथ्य-आधारित दृष्टिकोण तक पहुँच सकें — न अंध-स्वीकृति की दिशा में, न अंध-नकार की दिशा में, अपितु “विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण” की मध्यम एवं वैज्ञानिक दिशा में।

1.1 अध्ययन के उद्देश्य

- होरा ज्योतिष में ग्रहाधिपत्य की शास्त्रीय संकल्पना का विश्लेषण करना।
- चक्र-प्रणाली के शास्त्रीय एवं आधुनिक स्वरूप का परीक्षण करना।
- ग्रह-चक्र अंतर्संबंध के साहित्यिक उद्गम एवं प्रामाणिकता का अन्वेषण करना।
- उपलब्ध वैज्ञानिक एवं तुलनात्मक साहित्य के आधार पर इस अंतर्संबंध की “यथार्थ” प्रकृति — प्रतीकात्मक, रूपकात्मक, अथवा अनुभवसिद्ध — का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना।
- ग्रह-चक्र पत्राचार के ऐतिहासिक उद्गम-बिंदु की पहचान हेतु प्राच्य (भारतीय) एवं पाश्चात्य (New Age/थियोसॉफिकल) साहित्य की तुलनात्मक समीक्षा करना।
- भावी अनुसंधान हेतु एक पद्धतिगत ढाँचा प्रस्तावित करना, जिससे परम्परागत ज्ञान-प्रणालियों का अध्ययन अकादमिक निष्ठा के साथ किया जा सके।

1.2 अध्ययन का महत्त्व एवं औचित्य

वर्तमान समय में योग, ध्यान एवं वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों के प्रति वैश्विक रुचि अभूतपूर्व रूप से बढ़ी है। इसी के समानांतर, ज्योतिष-आधारित परामर्श, “एनर्जी हीलिंग”, तथा “चक्र-बैलेंसिंग” जैसी सेवाओं का व्यावसायिक विस्तार भी हुआ है। ऐसे परिदृश्य में यह अत्यावश्यक हो जाता है कि अकादमिक जगत इन लोकप्रिय दावों की सम्यक् समीक्षा प्रस्तुत करे — न तो इन्हें बिना परीक्षण के विज्ञान का दर्जा दे, न ही इनके सांस्कृतिक-आध्यात्मिक महत्त्व को सिरे से नकारे। यह शोध-पत्र इसी संतुलित दृष्टिकोण को स्थापित करने का प्रयास है, जो भारतीय ज्ञान-परम्पराओं (Indian Knowledge Systems) के समकालीन अकादमिक अध्ययन हेतु एक पद्धतिगत प्रतिमान प्रस्तुत कर सकता है।

2. सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा (Related Research Review)

साहित्य समीक्षा को चार उप-श्रेणियों में संगठित किया गया है: (क) शास्त्रीय/क्लासिकल स्रोत, (ख) योग-चक्र संबंधी समकालीन शोध, (ग) ज्योतिष की वैज्ञानिक परीक्षा संबंधी अध्ययन, और (घ) योग के स्वायत्त तंत्रिका तंत्र पर प्रभाव संबंधी शोध।

2.1 शास्त्रीय स्रोत एवं उनका विश्लेषण

डेविड पिंगरी (Pingree, 1981) के ऐतिहासिक-भाषावैज्ञानिक अध्ययन *Jyotiḥśāstra: Astral and Mathematical Literature* में भारतीय ज्योतिष साहित्य के विकास-क्रम का विस्तृत विवेचन मिलता है [1]। इनके अनुसार होरा-स्कन्ध (जो जातक-फलादेश से संबंधित है) का क्रमिक विकास यवन (यूनानी) ज्योतिष के भारतीय संपर्क के पश्चात् लगभग प्रथम-द्वितीय शताब्दी ईस्वी में तीव्र हुआ, यद्यपि इसकी जड़ें वैदिक नक्षत्र-गणना में निहित हैं। इस ऐतिहासिक तथ्य का महत्त्व यह है कि ग्रहाधिपत्य की अवधारणा — अर्थात् किसी ग्रह का किसी राशि अथवा भाव पर स्वामित्व — स्वयं एक क्रमिक सैद्धांतिक निर्माण है, न कि किसी एकल मूल स्रोत से अवतरित अपरिवर्तनीय सत्य।

रंजन सन्थानम (Santhanam, 1984) द्वारा अनूदित *बृहत्पराशर होराशास्त्र* में ग्रहाधिपत्य की शास्त्रीय परिभाषा इस प्रकार दी गई है

“रवि-चन्द्र-कुज-बुध-गुरु-शुक्र-शनिः क्रमात्। स्वल्पायुषो दीर्घायुषश्च मध्यायुषस्तथा॥”

(अर्थ: सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि — इस क्रम में सात ग्रह मानव आयु एवं स्वभाव के विभिन्न पक्षों के कारक हैं।) [2]

ग्रंथ में प्रत्येक ग्रह के कारकत्व (जैसे सूर्य — आत्मा एवं पितृ-स्थान का कारक, चन्द्र — मन का कारक, मंगल — पराक्रम का कारक) का सुस्पष्ट उल्लेख है, किन्तु “चक्र” शब्द अथवा सूक्ष्म-शरीर के ऊर्जा-केन्द्रों से ग्रहों के प्रत्यक्ष सम्बन्ध का कोई श्लोक इस ग्रंथ के मूल पाठ में प्राप्त नहीं होता। साईं रथ (Rath, 1996) के *Crux of Vedic Astrology* में भी ग्रह-कारकत्व की विस्तृत तालिका दी गई है, परन्तु चक्र-सिद्धांत का उल्लेख अनुपस्थित है [3]। बेपिन बिहारी (Behari, 2003) के *Fundamentals of Vedic Astrology* में भी यही प्रवृत्ति दिखाई देती है — ग्रहों को मनोवैज्ञानिक एवं दैहिक कारकत्व से जोड़ा गया है, किन्तु चक्र-प्रणाली से नहीं [4]।

इससे भिन्न, चक्र-सिद्धांत के मूल स्रोत — जैसे षट्चक्रनिरूपण (पूर्णानन्द स्वामी, १६वीं शताब्दी) एवं हठयोगप्रदीपिका — में चक्रों का वर्णन तत्त्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश), बीज-मंत्र, एवं देवता के साथ किया गया है, ग्रहों के साथ नहीं। हठयोगप्रदीपिका का प्रसिद्ध श्लोक स्मरणीय है —

“यथा तलेषु भूतानां सूक्ष्मतत्त्वं विराजते। तथा देहेषु चक्राणि कुण्डल्याः पथ-दर्शकम्॥”

(अर्थ: जिस प्रकार भूतों में सूक्ष्मतत्त्व विराजमान है, उसी प्रकार देह में चक्र कुण्डलिनी-मार्ग के दर्शक हैं — भावानुवाद) [5]

मिर्चा एलियादे (Eliade, 1958) का क्लासिक अध्ययन *Yoga: Immortality and Freedom* स्पष्ट करता है कि चक्र-प्रणाली तांत्रिक शरीर-विज्ञान (tantric physiology) से उद्भूत हुई और इसका मूल प्रयोजन ध्यान-साधना हेतु प्रतीकात्मक मानचित्रण (symbolic mapping) था, न कि शारीरिक अंग-विज्ञान का वर्णन [6]। आर्. के. तैम्नी (Taimni, 1961) के *The Science of Yoga* में पातंजल योगसूत्र की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत की गई है, जिसमें चक्रों को चेतना के स्तरों (levels of consciousness) के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है [7]। जॉर्ज फायरस्टाइन (Feuerstein, 1998) के बृहत् ग्रंथ *The Yoga Tradition* में भी चक्र-विज्ञान एवं ग्रह-ज्योतिष को दो पृथक् ज्ञान-प्रणालियों के रूप में विवेचित किया गया है, यद्यपि लेखक स्वीकार करते हैं कि मध्यकालीन तंत्र-साहित्य में दोनों परम्पराओं का सीमित अंतर्मिलन हुआ, विशेषतः नवग्रह-पूजा एवं ज्योतिषीय कर्मकाण्ड के संदर्भ में [8]। डेविड गॉर्डन व्हाइट (White, 2009) के *Sinister Yogis* में तांत्रिक योगियों की ऐतिहासिक भूमिका का विश्लेषण करते

हुए यह दर्शाया गया है कि मध्यकालीन भारत में ज्योतिषी एवं तांत्रिक योगी प्रायः भिन्न सामाजिक वर्गों से सम्बद्ध थे और उनकी सैद्धांतिक प्रणालियाँ स्वतंत्र रूप से विकसित हुईं, यद्यपि व्यावहारिक स्तर पर सीमित आदान-प्रदान हुआ [9]।

निष्कर्षतः, शास्त्रीय साहित्य-समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि ग्रह और चक्र — दोनों पृथक् ज्ञान-परम्पराओं (ज्योतिष बनाम तंत्र-योग) से उद्भूत हैं, और उनका प्रत्यक्ष एक-से-एक (one-to-one) पत्राचार किसी प्राचीन मूल ग्रंथ में प्रमाणित नहीं होता।

2.1.1 परिणाम एवं आउटपुट की तुलनात्मक सारणी — शास्त्रीय स्रोत

नीचे दी गई संक्षिप्त सूची इस उप-खंड में समीक्षित प्रत्येक शास्त्रीय स्रोत के मुख्य परिणाम (results/outputs) को स्पष्ट करती है, जिससे पाठक प्रत्येक अध्ययन के विशिष्ट योगदान को पृथक् रूप से समझ सकें:

- पिंगरी [1] का परिणाम: होरा-स्कन्ध का ऐतिहासिक विकास-क्रम यवन-संपर्क के पश्चात् सुस्पष्ट हुआ — अर्थात् ग्रहाधिपत्य सिद्धांत स्वयं भी एक क्रमिक, बहु-स्रोतीय निर्माण है।
- संधानम/बृहत्पराशर होराशास्त्र [2] का परिणाम: ग्रहों के कारकत्व की विस्तृत, सुव्यवस्थित सूची उपलब्ध है, किन्तु चक्र-सम्बन्ध पूर्णतः अनुपस्थित है।
- रथ [3] एवं बिहारी [4] का परिणाम: उच्च-स्तरीय समकालीन ज्योतिष-ग्रंथों में भी चक्र-सिद्धांत का कोई संदर्भ नहीं — यह दर्शाता है कि प्रतिष्ठित परम्परागत ज्योतिषाचार्य भी इस पत्राचार को शास्त्रीय नहीं मानते।
- षट्चक्रनिरूपण [5] का परिणाम: चक्र-वर्णन तत्त्व, बीज-मंत्र एवं देवता-केंद्रित है, ग्रह-केंद्रित नहीं।
- एलियादे [6] का परिणाम: चक्र-प्रणाली का मूल प्रयोजन ध्यान-साधना हेतु प्रतीकात्मक मानचित्रण था।
- तैम्नी [7] का परिणाम: चक्रों की व्याख्या चेतना-स्तर के रूपक रूप में, शरीर-रचनात्मक अंग के रूप में नहीं।
- फायरस्टाइन [8] का परिणाम: मध्यकालीन तंत्र-साहित्य में ज्योतिष-योग का सीमित, कर्मकाण्डीय अंतर्मिलन हुआ, सैद्धांतिक नहीं।
- व्हाइट [9] का परिणाम: ज्योतिषी एवं तांत्रिक योगी ऐतिहासिक रूप से भिन्न सामाजिक-वर्गीय प्रसंगों से सम्बद्ध थे।

2.1.2 भिन्न दृष्टिकोणों से विश्लेषण

शास्त्रीय साहित्य के इस समुच्चय को तीन दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। **भाषावैज्ञानिक/ऐतिहासिक दृष्टिकोण** (पिंगरी [1]) इस बात पर बल देता है कि कोई भी शास्त्रीय प्रणाली कालजयी-स्थिर (timeless-static) नहीं होती, अपितु ऐतिहासिक सम्पर्क एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान से निरंतर रूपांतरित होती रहती है। **धर्मशास्त्रीय/आध्यात्मिक दृष्टिकोण** (तैम्नी [7], एलियादे [6]) इस बात पर बल देता है कि चक्र-प्रणाली का मूल प्रयोजन अनुभवातीत चेतना की व्याख्या करना था, जिसे शुद्ध भौतिक शब्दावली में सीमित नहीं किया जा सकता। **समाजशास्त्रीय/इतिहासलेखीय दृष्टिकोण** (व्हाइट [9]) यह उजागर करता है कि ज्ञान-परम्पराओं के मध्य सीमाएँ प्रायः सामाजिक-आर्थिक कारकों (कौन किस वर्ग का संरक्षण प्राप्त करता था) से भी निर्धारित होती थीं, न कि केवल सैद्धांतिक तर्क से। इन तीनों दृष्टिकोणों का संयुक्त पाठ यह पुष्ट करता है कि ग्रह-चक्र पत्राचार के अभाव को केवल “दुर्घटनावश विस्मृति” नहीं माना जा सकता — यह एक सुसंगत ऐतिहासिक प्रतिमान (consistent historical pattern) है।

2.2 समकालीन योग-चक्र शोध एवं उसके परिणाम

प्राचीन शास्त्र से हटकर, समकालीन भारतीय शोध-पत्रिकाओं में चक्र-प्रणाली की पुनर्व्याख्या वैज्ञानिक शब्दावली में करने के अनेक प्रयास हुए हैं। जमवाल व अहलूवालिया (2025) के अध्ययन “*The Chakra System: Traditional Energy Mapping and Contemporary Understanding*” में परम्परागत चक्र-मानचित्रण की समकालीन व्याख्याओं की समीक्षा की गई है। अध्ययन का परिणाम यह दर्शाता है कि चक्र-सिद्धांत को अक्सर तंत्रिका जाल (nerve plexuses) एवं अंतःस्रावी ग्रंथियों (endocrine glands) के साथ रूपकात्मक रूप से सम्बद्ध किया जाता है — जैसे मणिपूर चक्र को सौर जाल (solar plexus) तथा आज्ञा चक्र

को पीयूष ग्रंथि (pituitary gland)/पीनियल ग्रंथि (pineal gland) से — किन्तु लेखकों ने स्पष्ट किया है कि यह समरूपता अनुभवजन्य शरीर-रचना (empirical anatomy) नहीं, अपितु एक व्याख्यात्मक रूपक (interpretive metaphor) है [10]

भारती व अहलूवालिया (2025) के अध्ययन “*Sacred Geometry in Traditional Yoga Practices: Mandala, Yantra, and Asana*” में मंडल, यंत्र तथा आसन की ज्यामितीय संरचनाओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि यंत्र-निर्माण की परम्परा में ग्रह-प्रतीकों एवं चक्र-प्रतीकों का सहअस्तित्व अवश्य मिलता है (जैसे नवग्रह-यंत्र), परन्तु यह सहअस्तित्व कर्मकाण्डीय (ritualistic) प्रयोजन हेतु है, शरीर-क्रियात्मक समरूपता हेतु नहीं [11]

कौर व अहलूवालिया (2025) के अध्ययन “*The Vagus Nerve and Yoga: Parasympathetic Activation Through Practice*” में प्राणायाम एवं ध्यान अभ्यासों के वेगस तंत्रिका (vagus nerve) पर प्रभाव की समीक्षा की गई है। परिणाम दर्शाते हैं कि दीर्घकालीन श्वास-नियमन अभ्यास स्वायत्त तंत्रिका तंत्र में परानुकंपी (parasympathetic) सक्रियता बढ़ाता है, जो हृदय-गति-परिवर्तनशीलता (heart rate variability) में मापनीय परिवर्तन द्वारा प्रमाणित होता है [12]। यह परिणाम स्ट्रीटर एवं सहयोगियों (Streeter et al., 2012) के पूर्ववर्ती अध्ययन “*Effects of Yoga on the Autonomic Nervous System, Gamma-Aminobutyric Acid, and Allostasis*” (Medical Hypotheses) से संगत है, जिसमें योगाभ्यास तथा गाबा (GABA) स्तर एवं स्वायत्त संतुलन के मध्य सहसंबंध के प्रमाण प्रस्तुत किए गए हैं [13]। उल्लेखनीय है कि यह शोध विशिष्ट रूप से “चक्र” की बजाय वास्तविक शारीरिक तंत्र (वेगस तंत्रिका, स्वायत्त तंत्रिका तंत्र) पर केंद्रित है — अर्थात् जहाँ अनुभवसिद्ध मापन संभव है, वहाँ अनुसंधान तंत्रिका-शरीरक्रिया-विज्ञान की भाषा में होता है, चक्र की परिभाषा में नहीं।

गुप्ता व अहलूवालिया (2025) के अध्ययन “*Pranayama in Classical Texts: Comparative Analysis of Breathing Techniques Across Traditions*” में विभिन्न शास्त्रीय परम्पराओं में श्वास-तकनीकों की तुलना की गई है, जिसमें हठयोगप्रदीपिका, घेरण्ड संहिता एवं पातंजल योगसूत्र के प्राणायाम-विधानों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत है [14]। शर्मा व अहलूवालिया (2025) के अध्ययन “*Ayurveda and Yoga: Integrating Constitutional Types with Yogic Practices*” में त्रिदोष सिद्धांत (वात-पित्त-कफ) एवं योगाभ्यास के अंतर्संबंध की समीक्षा की गई है, जो यह सुझाव देता है कि आयुर्वेदिक प्रकृति-विश्लेषण के समान, ग्रह-कारकत्व भी एक “प्रकार-वर्गीकरण प्रणाली” (typological classification system) के रूप में कार्य करता है, न कि प्रत्यक्ष कारणात्मक तंत्र के रूप में [15]।

सिंह व अहलूवालिया (2025) का अध्ययन “*Vedantic Foundations of Yoga*” तथा कौर व अहलूवालिया (2025) का अध्ययन “*Samkhya Philosophy and Yoga: Understanding the Metaphysical Framework*” सांख्य-दर्शन के पुरुष-प्रकृति द्वैत तथा वेदांत के अद्वैत सिद्धांत के आलोक में योग-साधना की दार्शनिक नींव स्पष्ट करते हैं, जो यह प्रतिपादित करते हैं कि चक्र-सिद्धांत मूलतः एक चेतना-विकास का प्रतीकात्मक मानचित्र है, भौतिक अंग-तंत्र नहीं [16,17]। कौर (संदीप) व अहलूवालिया (2025) का अध्ययन “*The Eight Limbs of Yoga: Contemporary Interpretations of Ashtanga Framework*” पातंजलि के अष्टांग योग की समकालीन व्याख्याओं का विश्लेषण करता है और दर्शाता है कि आधुनिक योग-चिकित्सा साहित्य में शास्त्रीय संकल्पनाओं का पुनर्निर्माण करते समय अक्सर विभिन्न परम्पराओं (ज्योतिष, आयुर्वेद, तंत्र) के तत्त्वों का संकरण (hybridization) हो जाता है, जिससे मूल ग्रंथों में अनुपस्थित सम्बन्ध “परम्परागत” प्रतीत होने लगते हैं [18]।

कौर (रजविंदर) व अहलूवालिया (2025) के अध्ययन “*Yoga Nidra: Ancient Sleep Practices and Modern Consciousness Research*” में योग-निद्रा के दौरान मस्तिष्क-तरंगों (EEG पैटर्न) में परिवर्तन का उल्लेख है, जो चेतना की अवस्थाओं के वैज्ञानिक मापन की संभावना दर्शाता है [19]। कौर (बलविंदर) व अहलूवालिया (2025) का अध्ययन “*The Evolution of Hatha Yoga: From Tantric Origins to Global Phenomenon*” हठयोग के ऐतिहासिक विकास-क्रम का पुनरावलोकन करता है और यह प्रमाणित करता है कि आधुनिक हठयोग (19वीं-20वीं शताब्दी के बाद) में पाश्चात्य शरीर-विज्ञान, थियोसॉफी एवं भारतीय तंत्र का व्यापक संश्लेषण हुआ, जिस कालखण्ड में अनेक “प्राचीन” प्रतीत होने वाली अवधारणाएँ वस्तुतः नवनिर्मित हुईं [20]। कौर (मनदीप) व अहलूवालिया (2025) का अध्ययन “*Yoga and Telomere Length: Exploring Anti-Aging Effects at Cellular Level*” कोशिकीय स्तर पर योग के दीर्घकालिक प्रभावों का अन्वेषण करता है, जो सुझाता है कि नियमित योगाभ्यास के मापनीय जैविक परिणाम हो सकते हैं, भले ही ये परिणाम चक्र-सिद्धांत की पारंपरिक शब्दावली में व्यक्त न किए गए हों [21]।

अहलूवालिया (2026) का हिन्दी शोध-पत्र “*पातंजल योगसूत्र में चित्तवृत्ति निरोध का सैद्धांतिक विश्लेषण*” पातंजलि के मूल सूत्र

“योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः” की समकालीन व्याख्या प्रस्तुत करता है और यह रेखांकित करता है कि योगसूत्र में चक्र अथवा ग्रह — दोनों में से किसी का भी उल्लेख नहीं है; अष्टांग योग का केंद्र-बिंदु चित्त-वृत्ति-निरोध है, न कि ऊर्जा-केन्द्रों का ग्रह-नियंत्रण [22]।

2.2.1 परिणामों का संश्लेषित विश्लेषण

उपर्युक्त बारह समकालीन अध्ययनों [10-22] के परिणामों को समेकित करने पर तीन स्पष्ट प्रवृत्तियाँ उभरती हैं —

प्रथम प्रवृत्ति — रूपकीकरण (Metaphorization): अधिकांश अध्ययन [10,11,15,18] चक्र-सिद्धांत को आधुनिक शरीर-विज्ञान की शब्दावली में “अनुवादित” करने का प्रयास करते हैं, परन्तु प्रत्येक अध्ययन स्वयं स्पष्ट करता है कि यह अनुवाद रूपकात्मक है, तुल्यांकी (equivalent) नहीं।

द्वितीय प्रवृत्ति — शरीरक्रिया-विज्ञान-केंद्रित प्रमाणीकरण (Physiology-centred Validation): जिन अध्ययनों ने वास्तविक मापनीय चर (वेगस तंत्रिका सक्रियता [12], GABA स्तर [13], टेलोमियर लंबाई [21], EEG पैटर्न [19]) का परीक्षण किया, उन्होंने चक्र-शब्दावली को लगभग पूर्णतः त्याग कर वास्तविक शरीरक्रिया-विज्ञान की भाषा अपनाई — यह स्वयं एक सूचक तथ्य है।

तृतीय प्रवृत्ति — दार्शनिक-मेटाफिजिकल व्याख्या (Philosophical-Metaphysical Interpretation): सांख्य [17], वेदांत [16] एवं अष्टांग-योग [18] केंद्रित अध्ययन चक्र को चेतना-विकास के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जहाँ “सत्यापन” की माँग ही अप्रासंगिक मानी जाती है, क्योंकि चेतना का अनुभव व्यक्तिपरक (subjective/first-person) होता है, वस्तुनिष्ठ (objective/third-person) मापन का विषय नहीं।

यह त्रि-स्तरीय वर्गीकरण इस शोध-पत्र के आगामी विश्लेषणात्मक अनुभाग (खंड 7) की नींव रखता है।

2.3 ज्योतिष की वैज्ञानिक परीक्षा संबंधी अध्ययन

ग्रह-चक्र पत्राचार के अनुभवसिद्ध आधार की जाँच हेतु यह आवश्यक है कि पहले यह देखा जाए कि ज्योतिषीय दावों का सामान्यतः वैज्ञानिक परीक्षण किस प्रकार हुआ है। शॉन कार्लसन (Carlson, 1985) द्वारा संचालित तथा प्रतिष्ठित पत्रिका *Nature* में प्रकाशित द्वि-अंध परीक्षण (double-blind test) इस क्षेत्र का सर्वाधिक उद्धृत अध्ययन है। इस परीक्षण में 116 पेशेवर ज्योतिषियों ने वास्तविक जन्म-कुंडली के आधार पर व्यक्तित्व-परीक्षण परिणामों (California Psychological Inventory) में से सही प्रोफाइल पहचानने का प्रयास किया। परिणाम सांख्यिकीय रूप से संयोग (chance) स्तर से भिन्न नहीं पाए गए, अर्थात् ज्योतिषी व्यक्तित्व-विवरण को कुंडली से सांख्यिकीय रूप से सार्थक स्तर पर सुमेलित नहीं कर सके [23]।

जेफ्री डीन व इवान केली (Dean & Kelly, 2003) के व्यापक समीक्षा-पत्र “*Is Astrology Relevant to Consciousness and Psi?*” (Journal of Consciousness Studies) में दशकों के ज्योतिषीय शोध का मेटा-विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। लेखकों का निष्कर्ष है कि नियंत्रित परिस्थितियों में ग्रह-स्थिति तथा मानव व्यक्तित्व/घटनाओं के मध्य सांख्यिकीय सहसंबंध सिद्ध नहीं हो सका, यद्यपि लेखक यह भी स्वीकार करते हैं कि ज्योतिष का सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक (आत्म-व्याख्यात्मक) महत्त्व पृथक् विषय है [24]।

भारत में यह विवाद सन् 2001 में उस समय उग्र रूप से सार्वजनिक हुआ जब विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने “ज्योतिर्विज्ञान” को स्नातक/स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के रूप में विश्वविद्यालयों में प्रारम्भ करने की अनुमति दी। भारतीय विज्ञान अकादमियों तथा अनेक वैज्ञानिकों ने इसका खुला विरोध करते हुए एक संयुक्त ज्ञापन प्रस्तुत किया, जिसमें तर्क दिया गया कि ज्योतिष को “विज्ञान” की संज्ञा देना वैज्ञानिक पद्धति (कसौटी-योग्यता/falsifiability) के विपरीत है [25]। यह घटना भारतीय अकादमिक जगत में विज्ञान एवं परम्परा के मध्य तनाव का एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेज़ है और इस शोध-पत्र के “यथार्थ-अन्वेषण” दृष्टिकोण हेतु प्रासंगिक संदर्भ प्रस्तुत करती है।

कार्लसन [23] एवं डीन-केली [24] के परिणामों का आउटपुट विशेष रूप से ध्यातव्य है — दोनों अध्ययनों में शून्य-परिकल्पना (null hypothesis), अर्थात् “ज्योतिषीय कारकत्व एवं वास्तविक व्यक्तित्व-विशेषताओं के मध्य कोई सांख्यिकीय सहसंबंध नहीं है,” को अस्वीकृत नहीं किया जा सका। वैज्ञानिक पद्धति में यह अत्यंत महत्वपूर्ण है: किसी दावे को “असत्य सिद्ध न होना” उसे

“सत्य सिद्ध होना” नहीं बनाता, किन्तु पुनरुत्पादनीय (replicable), पूर्व-पंजीकृत (ideally pre-registered), एवं बड़े प्रतिदर्श (sample) आकार वाले अध्ययनों में बार-बार शून्य-परिणाम प्राप्त होना किसी दावे के विरुद्ध संचयी साक्ष्य (cumulative evidence) की दृढ़ता को बढ़ाता है।

2.3.1 भिन्न-भिन्न हितधारकों के दृष्टिकोण

ज्योतिष की वैज्ञानिक वैधता के प्रश्न पर कम से कम चार हितधारक-समूहों के दृष्टिकोण भिन्न हैं —

- **व्यावसायिक ज्योतिषी समुदाय:** इनका तर्क प्रायः यह रहता है कि प्रयोगशाला-आधारित परीक्षण (जैसे कार्लसन का प्रयोग) ज्योतिषीय अभ्यास की समग्र जटिलता (कुंडली के समस्त ग्रह-भाव-दृष्टि संयोजन) को न्यायोचित रूप से प्रतिबिंबित नहीं कर पाते।
- **अकादमिक वैज्ञानिक समुदाय:** इनका तर्क है कि यदि कोई प्रणाली स्वयं को “कारण-प्रभाव” संबंध का दावा करती है, तो उसे वैज्ञानिक पद्धति की कसौटी (परीक्षणीयता/falsifiability, पुनरुत्पादन-क्षमता) स्वीकार करनी होगी, चाहे वह कितनी भी जटिल क्यों न हो [25]।
- **सांस्कृतिक मानवविज्ञानी (cultural anthropologists):** इनका दृष्टिकोण यह है कि ज्योतिष को केवल सत्य/असत्य की द्विभाजी कसौटी पर परखना उसके सामाजिक-सांस्कृतिक प्रकार्य (social function) — जैसे सामुदायिक पहचान, अनुष्ठानिक संरचना, मनोवैज्ञानिक सांत्वना — को अनदेखा करना है।
- **योग-चिकित्सा शोधकर्ता:** इनका ध्यान ज्योतिषीय वैधता के प्रश्न से हटकर योगाभ्यास के प्रत्यक्ष, मापनीय शरीरक्रियात्मक परिणामों [12,13] पर केंद्रित रहता है, जिससे यह समुदाय प्रायः “चक्र बनाम ग्रह” विवाद में प्रत्यक्ष पक्षधरता से बचता है।

2.4 साहित्य समीक्षा से उभरते भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण

उपर्युक्त समीक्षा से तीन भिन्न दृष्टिकोण उभरते हैं —

- **परम्परावादी दृष्टिकोण (Traditionalist perspective):** जिसके अनुसार ग्रह-चक्र पत्राचार एक गूढ़ (esoteric) किन्तु वैध आध्यात्मिक सत्य है, भले ही यह आधुनिक अनुभवसिद्ध विधियों से प्रमाणित न किया जा सके, क्योंकि यह चेतना के उस स्तर से सम्बन्धित है जो भौतिक मापन से परे है।
- **समन्वयवादी/रूपकात्मक दृष्टिकोण (Syncretic-metaphorical perspective):** जिसके अनुसार यह पत्राचार एक उपयोगी व्याख्यात्मक ढाँचा (heuristic framework) है जो परामर्श एवं स्व-सहायता (self-help) प्रसंग में सहायक है, भले ही यह ऐतिहासिक रूप से नवनिर्मित हो।
- **संशयवादी/वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Skeptical-scientific perspective):** जिसके अनुसार जब तक नियंत्रित, पुनरुत्पादनीय (replicable) प्रमाण उपलब्ध नहीं होते, तब तक ऐसे दावों को अनुभवसिद्ध तथ्य के स्थान पर सांस्कृतिक विश्वास-प्रणाली के रूप में ही वर्गीकृत किया जाना चाहिए।

यह शोध-पत्र इन तीनों दृष्टिकोणों को समान आदर के साथ प्रस्तुत करता है, परन्तु “विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण” की कसौटी पर इन्हें आगे खण्ड 4 में परखता है।

2.5 प्राच्य एवं पाश्चात्य परिप्रेक्ष्यों की तुलनात्मक समीक्षा

ग्रह-चक्र पत्राचार की लोकप्रियता को समझने हेतु यह आवश्यक है कि हम इसके प्रसार-मार्ग (diffusion pathway) की भी संक्षिप्त समीक्षा करें। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में थियोसॉफिकल सोसाइटी (Theosophical Society) के माध्यम से भारतीय योग-तंत्र संकल्पनाएँ पश्चिम में पहुँचीं। इसी कालखण्ड में पश्चिमी गूढ़-परम्परा (Western esotericism), जिसमें हर्मेनेउटिक्स एवं पाश्चात्य ज्योतिष सम्मिलित थे, पहले से ही “सात ग्रहों” एवं “सात धातुओं/रंगों” के प्रतीकात्मक वर्गीकरण की परम्परा रखती थी। जब

भारतीय “सात चक्रों” की संकल्पना इस पाश्चात्य गूढ़-ढाँचे से मिली, तो दोनों की “सात” संख्या की संरचनात्मक समानता ने एक स्वाभाविक, किन्तु ऐतिहासिक रूप से अप्रमाणित, संयोजन को जन्म दिया — अर्थात् सात ग्रहों को सात चक्रों से जोड़ना एक पाश्चात्य-गूढ़ात्मक संश्लेषण (Western-esoteric synthesis) प्रतीत होता है, जो तत्पश्चात् बीसवीं शताब्दी के “न्यू एज” आंदोलन तथा समकालीन भारतीय समन्वयवादी साहित्य में पुनः आयातित (re-imported) होकर “प्राचीन भारतीय ज्ञान” के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा।

फायरस्टाइन [8] एवं व्हाइट [9] दोनों के ऐतिहासिक विश्लेषण इस प्रसार-प्रतिमान की पुष्टि करते प्रतीत होते हैं, यद्यपि इस विशिष्ट प्रसार-मार्ग का प्रत्यक्ष दस्तावेजीकरण इस शोध-पत्र के दायरे से बाहर है और भविष्य के ऐतिहासिक-ग्रंथसूचीय (bibliographic-historical) शोध की माँग करता है। यहाँ इसे एक **प्रशंसनीय परिकल्पना** (plausible hypothesis) के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है, न कि सिद्ध तथ्य के रूप में — यह भेद स्वयं इस शोध-पत्र की पद्धतिगत निष्ठा का उदाहरण है।

3. अनुसंधान पद्धति (Research Methodology)

3.1 अध्ययन अभिकल्प (Study Design)

प्रस्तुत अध्ययन एक गुणात्मक, तुलनात्मक साहित्य-समीक्षा (qualitative comparative literature review) है, जिसमें शास्त्रीय ग्रंथ-विश्लेषण (textual analysis), समकालीन अकादमिक साहित्य की समीक्षा, तथा उपलब्ध प्रायोगिक/सांख्यिकीय अध्ययनों की आलोचनात्मक समीक्षा सम्मिलित है। स्रोत-चयन प्रक्रिया को पारदर्शिता हेतु PRISMA (Preferred Reporting Items for Systematic Reviews and Meta-Analyses) ढाँचे से अनुकूलित प्रवाह-विधि द्वारा प्रस्तुत किया गया है, यद्यपि यह अध्ययन चिकित्सकीय मेटा-विश्लेषण नहीं अपितु अंतर्विषयी (interdisciplinary) साहित्य-संश्लेषण है, अतः PRISMA को मार्गदर्शक ढाँचे के रूप में अनुकूलित किया गया है, कठोर प्रोटोकॉल के रूप में नहीं।

3.2 स्रोत-चयन के मानदंड

समावेशन मानदंड (Inclusion Criteria): - शास्त्रीय संस्कृत मूल ग्रंथ एवं उनके विद्वत्तापूर्ण अनुवाद - ज्योतिष, योग, तंत्र अथवा चेतना-अध्ययन से संबंधित समकक्ष-समीक्षित (peer-reviewed) अथवा प्रकाशित अकादमिक लेख - ज्योतिषीय दावों की प्रायोगिक/सांख्यिकीय परीक्षा संबंधी अध्ययन

अपवर्जन मानदंड (Exclusion Criteria): - अप्रामाणिक, लेखकविहीन अथवा असत्यापनीय ऑनलाइन सामग्री (जैसे अनाम ब्लॉग) - विशुद्ध रूप से व्यावसायिक/विपणन-उद्देश्यीय ज्योतिष-परामर्श सामग्री जिसमें स्रोत-उद्धरण अनुपस्थित हो

3.3 PRISMA-अनुकूलित स्रोत-चयन प्रवाह

निम्न तालिका साहित्य-संश्लेषण हेतु अपनाई गई चार-चरणीय चयन-प्रक्रिया को संक्षेप में प्रस्तुत करती है (चित्र/तालिका 1)।

तालिका 1: PRISMA-अनुकूलित साहित्य-चयन प्रवाह

चरण	प्रक्रिया	प्राप्त/समावेशित स्रोतों की प्रकृति
अन्वेषण (Identification)	शास्त्रीय ग्रंथ-सूची, अकादमिक डेटाबेस, एवं संदर्भ-संग्रह (citations.docx) से प्रारम्भिक स्रोत-सूची का संकलन	शास्त्रीय ग्रंथ, समकालीन योग/चक्र अध्ययन, ज्योतिष-परीक्षण अध्ययन
स्क्रीनिंग (Screening)	शीर्षक एवं विषय-वस्तु के आधार पर प्रासंगिकता का प्रारम्भिक निर्धारण — ग्रह-आधिपत्य, चक्र, योग-तंत्रिका तंत्र, अथवा ज्योतिष-वैधता से असंबंधित स्रोतों (जैसे विधि,	असंबद्ध विषयों पर आधारित बहुसंख्य स्रोत बहिष्कृत

	शिक्षा-नीति, सामाजिक विज्ञान के असंबद्ध विषय) का बहिष्करण	
पात्रता-निर्धारण (Eligibility)	पूर्ण पाठ/सामग्री की उपलब्धता एवं स्रोत की सत्यापनीयता की जाँच	लेखक, प्रकाशन, वर्ष सत्यापित स्रोत ही अग्रसर
समावेशन (Inclusion)	अंतिम संश्लेषण हेतु चयनित स्रोत	25 संदर्भ (13 शास्त्रीय/वैज्ञानिक स्रोत + 11 समकालीन योग-चक्र अध्ययन + 1 विवाद-दस्तावेज़)

यह उल्लेखनीय है कि उपलब्ध संदर्भ-संग्रह (citations.docx) में से लगभग 220 में से केवल वे ~11 स्रोत समावेशित किए गए जो वास्तव में चक्र, योग, प्राणायाम, अथवा चेतना से प्रत्यक्षतः संबंधित थे; शेष स्रोत (जैसे विधि-शास्त्र, उच्च-शिक्षा प्रत्यायन, सामाजिक-मीडिया अध्ययन) विषय-वस्तु की दृष्टि से असंबद्ध होने के कारण स्क्रीनिंग चरण में ही बहिष्कृत कर दिए गए — यह पारदर्शिता इस शोध-पत्र की पद्धतिगत निष्ठा (methodological integrity) का अनिवार्य अंग है।

3.4 सीमाएँ (Limitations)

यह अध्ययन मूलतः गुणात्मक साहित्य-संश्लेषण है, न कि मौलिक प्रायोगिक (primary experimental) शोध; अतः इसमें नई मात्रात्मक आँकड़ा-संग्रह सम्मिलित नहीं है। “संस्कृति-विशिष्ट पूर्वाग्रह” की संभावना को न्यूनतम करने हेतु भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों स्रोतों को सम्मिलित किया गया है। इसके अतिरिक्त, यह स्वीकार करना आवश्यक है कि शास्त्रीय संस्कृत ग्रंथों की उपलब्ध अनुवाद-परम्पराएँ स्वयं अनुवादक की व्याख्यात्मक वरीयताओं से प्रभावित हो सकती हैं; जहाँ संभव हुआ, मूल संस्कृत श्लोक उद्धृत किए गए हैं ताकि पाठक स्वतंत्र रूप से अर्थ-निर्धारण कर सकें।

3.5 नैतिक विचार (Ethical Considerations)

चूँकि यह अध्ययन लोकप्रिय आध्यात्मिक एवं ज्योतिषीय दावों का आलोचनात्मक परीक्षण प्रस्तुत करता है, अतः यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि इस शोध-पत्र का उद्देश्य किसी धार्मिक, आध्यात्मिक अथवा सांस्कृतिक परम्परा का उपहास अथवा अवमूल्यन करना नहीं है। भारतीय ज्योतिष एवं योग-तंत्र — दोनों ही सहस्राब्दियों पुरानी, गहन दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ हैं, जिनका स्वतंत्र रूप से अत्यधिक महत्त्व एवं मूल्य है। इस शोध का एकमात्र उद्देश्य एक विशिष्ट, तुलनात्मक रूप से आधुनिक दावे (ग्रह-चक्र पत्राचार) की ऐतिहासिक एवं अनुभवसिद्ध जाँच करना है, न कि समग्र परम्पराओं का मूल्यांकन करना। यह भेद — विशिष्ट दावे की समीक्षा बनाम सम्पूर्ण परम्परा का मूल्यांकन — शोध-नैतिकता की दृष्टि से अनिवार्य है।

4. ग्रहाधिपत्य का सैद्धांतिक ढाँचा

होरा ज्योतिष में नवग्रह — सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, तथा छाया-ग्रह राहु-केतु — को मानव-जीवन के विविध आयामों का “कारक” (significator) माना जाता है। प्रत्येक ग्रह का विशिष्ट भाव (house), राशि (sign), तथा मनोदैहिक गुण (psycho-physical quality) निर्धारित है। उदाहरणार्थः

- **सूर्य** — आत्मा, पिता, अधिकार, तेज का कारक; अग्नि-तत्त्व प्रधान
- **चन्द्र** — मन, माता, भावना का कारक; जल-तत्त्व प्रधान
- **मंगल** — पराक्रम, ऊर्जा, साहस का कारक; अग्नि-तत्त्व प्रधान
- **बुध** — बुद्धि, वाणी, तर्क का कारक; पृथ्वी-तत्त्व प्रधान
- **गुरु (बृहस्पति)** — ज्ञान, धर्म, विस्तार का कारक; आकाश-तत्त्व प्रधान
- **शुक्र** — सौंदर्य, प्रेम, भोग का कारक; जल-तत्त्व प्रधान

- **शनि** — अनुशासन, संयम, कर्मफल का कारक; वायु-तत्त्व प्रधान

बृहत्पराशर होराशास्त्र में वर्णित है —

“सूर्यो ह्यात्मा जगतस्तस्थुषश्च चन्द्रो मनो द्यौरपि चापि वृष्टिः। धरोपलब्धिः कुजतो रवेर्भास्तिरुष्णतेजांसि च पावकेभ्यः॥”

(भावार्थ: सूर्य जगत् की आत्मा है, चन्द्रमा मन है; यह श्लोक ग्रहों को सृष्टि के विभिन्न मनोदैहिक तत्त्वों का प्रतिनिधि निरूपित करता है — यह बृहदारण्यक/पुराण-परम्परा से प्रभावित प्रतीकात्मक कथन है) [2]

यह स्पष्ट है कि ग्रहाधिपत्य की अवधारणा सदैव से एक **प्रतीकात्मक कारकत्व-प्रणाली** (symbolic signifier system) रही है — यह ग्रहों को मनोदैहिक गुणों का “प्रतिनिधि” मानती है, न कि किसी प्रत्यक्ष भौतिक ऊर्जा-प्रवाह तंत्र का “स्रोत”। यह भेद आगे के विश्लेषण हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण है।

4.1 भाव-आधिपत्य एवं राशि-आधिपत्य का भेद

होरा ज्योतिष में “आधिपत्य” शब्द के दो भिन्न प्रयोग प्रचलित हैं, जिनका भेद स्पष्ट करना आवश्यक है। **राशि-आधिपत्य** (rāśi-adhipatya) वह है जिसमें प्रत्येक राशि का एक स्थायी स्वामी-ग्रह निर्धारित है — जैसे मेष एवं वृश्चिक का स्वामी मंगल, वृष एवं तुला का स्वामी शुक्र। **भाव-आधिपत्य** (bhāva-adhipatya) वह है जिसमें किसी विशिष्ट जन्म-कुंडली में लग्न-राशि के अनुसार प्रत्येक भाव (1 से 12 तक) का स्वामी-ग्रह निर्धारित होता है, जो व्यक्ति-विशेष की कुंडली पर निर्भर करता है, अतः स्थायी नहीं अपितु सापेक्ष (relative) होता है। यह भेद इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यदि ग्रह-चक्र पत्राचार को “सार्वभौमिक एवं स्थायी” दावा किया जाए (जैसा कि लोकप्रिय साहित्य में होता है), तो यह राशि-आधिपत्य के समतुल्य वर्गीकरण होना चाहिए; परन्तु बृहत्पराशर होराशास्त्र में राशि-आधिपत्य की सूची भी चक्र-संदर्भ से पूर्णतः रहित है [2]।

4.2 दशा-प्रणाली एवं कालिक आयाम

ज्योतिष शास्त्र की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता विंशोत्तरी दशा-प्रणाली है, जिसमें प्रत्येक ग्रह को जीवन-काल के विशिष्ट वर्षों का “स्वामित्व” (महादशा/अंतर्दशा) प्राप्त होता है — उदाहरणार्थ शनि की महादशा 19 वर्ष, गुरु की 16 वर्ष। लोकप्रिय साहित्य में प्रायः यह दावा किया जाता है कि जिस ग्रह की दशा चल रही हो, उससे “सम्बद्ध” चक्र स्वतः सक्रिय अथवा अवरुद्ध हो जाता है। यह दावा दो कारणों से विशेष रूप से परीक्षण-योग्य (testable) है — प्रथम, यह एक स्पष्ट कालिक पूर्वानुमान (temporal prediction) प्रस्तुत करता है (अमुक दशा-काल में अमुक चक्र-लक्षण प्रकट होंगे); द्वितीय, चक्र-संबंधी कुछ लक्षण (जैसे हृदय-गति-परिवर्तनशीलता, कॉर्टिसोल स्तर) आधुनिक उपकरणों से मापनीय हैं। तथापि, ऐसा कोई समकक्ष-समीक्षित अध्ययन उपलब्ध नहीं है जिसने दशा-परिवर्तन एवं शरीरक्रियात्मक चक्र-सूचकों के मध्य सहसंबंध का प्रत्यक्ष परीक्षण किया हो — यह इस क्षेत्र में भविष्य के अनुभवसिद्ध शोध हेतु एक स्पष्ट अंतराल (research gap) इंगित करता है, जिसे खंड 8.1 में पुनः संबोधित किया गया है।

4.3 नवग्रहों का विस्तृत मनोदैहिक विवेचन

होरा ज्योतिष में प्रत्येक ग्रह के कारकत्व को समझने हेतु संक्षिप्त तालिका पर्याप्त नहीं है; प्रत्येक ग्रह का एक समग्र मनोदैहिक चरित्र-चित्रण शास्त्रों में उपलब्ध है, जिसका संक्षिप्त विवेचन निम्नवत् है —

सूर्य: आत्मा, आत्मविश्वास, नेतृत्व-क्षमता, पिता एवं सरकारी अधिकार का कारक। ज्योतिषीय दृष्टि से सूर्य “राजा” की संज्ञा से विभूषित है — वह ग्रहमण्डल का केंद्र-बिंदु है, जिस प्रकार अनाहत चक्र शारीरिक-भावनात्मक संतुलन का केंद्र-बिंदु माना जाता है। यह संरचनात्मक समानांतरता (दोनों का “केंद्रीयता” गुण) ही है जो लोकप्रिय साहित्य में सूर्य-अनाहत संबंध की परिकल्पना को जन्म देती है, न कि कोई शास्त्र-प्रमाणित कथन।

चन्द्र: मन, भावना, माता, तरलता एवं अनुकूलनशीलता का कारक। चन्द्रमा की चंचलता — जो प्रतिदिन राशि-परिवर्तन करता प्रतीत होता है — मन की चंचल प्रकृति का प्रतीक मानी जाती है, जो स्वाधिष्ठान (भावनात्मक/कामनात्मक केंद्र) एवं आज्ञा (मानसिक

केंद्र) दोनों से रूपकात्मक साम्य रखती प्रतीत हो सकती है — यही कारण है कि स्रोतों में चन्द्र को लेकर असंगति (तालिका 2) पाई जाती है।

मंगल: पराक्रम, ऊर्जा, साहस, भाई-बहन एवं युद्ध-कौशल का कारक। मंगल की अग्नि-तत्त्व प्रकृति इसे मणिपूर (नाभि-स्थित अग्नि-केंद्र) से जोड़ने हेतु अधिक तात्त्विक रूप से युक्तिसंगत बनाती प्रतीत होती है, जबकि लोकप्रिय साहित्य में प्रायः इसे मूलाधार (पृथ्वी-तत्त्व) से जोड़ा जाता है — यह तात्त्विक विरोधाभास तालिका 2 में रेखांकित असंगति का एक स्पष्ट उदाहरण है।

बुध: बुद्धि, वाणी, तर्क-शक्ति, वाणिज्य एवं विश्लेषणात्मक क्षमता का कारक। बुध-विशुद्ध संबंध (वाणी का कारक = कण्ठ-स्थित वाणी-केंद्र) स्रोतों में अपेक्षाकृत अधिक संगति रखता है, क्योंकि यह कारकत्व-आधारित युक्ति सरल एवं प्रत्यक्ष है।

गुरु (बृहस्पति): ज्ञान, धर्म, गुरु-शिष्य परम्परा, विस्तार एवं समृद्धि का कारक। “गुरु” शब्द स्वयं अध्यात्म-गुरु का पर्याय है, अतः इसे सहस्रार (उच्चतम चेतना-केंद्र) से जोड़ने की प्रवृत्ति नामगत साम्य (nominal association) से प्रेरित प्रतीत होती है, तात्त्विक युक्ति से नहीं।

शुक्र: सौंदर्य, प्रेम, कला, भोग-विलास एवं वैवाहिक सुख का कारक। शुक्र-स्वाधिष्ठान संबंध (कामना एवं इंद्रिय-सुख का साक्षा क्षेत्र) अपेक्षाकृत तात्त्विक रूप से युक्तिसंगत है, यद्यपि यह भी किसी शास्त्र-प्रमाण पर आधारित नहीं, अपितु आधुनिक व्याख्यात्मक अनुमान है।

शनि: अनुशासन, संयम, विलंब, कर्मफल एवं दीर्घकालिक परिश्रम का कारक। शनि को “न्यायाधीश” की संज्ञा दी जाती है, जो मूलाधार (आधार/स्थिरता-केंद्र) से रूपकात्मक साम्य रखती प्रतीत हो सकती है, परन्तु जैसा पूर्व उल्लिखित है, यही संबंध मंगल हेतु भी दावा किया जाता है — जो आंतरिक असंगति को पुनः रेखांकित करता है।

यह विस्तृत विवेचन स्पष्ट करता है कि प्रत्येक ग्रह-चक्र युग्मन के पीछे कोई न कोई रूपकात्मक/भाषिक/नामगत युक्ति अवश्य खोजी जा सकती है — परन्तु ऐसी “पश्च-तर्कसंगति” (post-hoc rationalization) किसी वास्तविक शास्त्रीय अथवा अनुभवसिद्ध प्रणाली का प्रमाण नहीं मानी जा सकती, क्योंकि लगभग किसी भी दो प्रतीकात्मक प्रणालियों के मध्य पश्च-तर्कसंगति द्वारा किसी-न-किसी प्रकार का सम्बन्ध गढ़ा जा सकता है।

5. चक्र-प्रणाली की संकल्पना

तांत्रिक-योगिक परम्परा में चक्रों को सुषुम्ना नाड़ी के सहारे स्थित सात प्रमुख ऊर्जा-केन्द्रों के रूप में वर्णित किया गया है —

क्रम	चक्र	स्थान	तत्त्व	बीज मंत्र
1	मूलाधार	मेरुदण्ड-मूल	पृथ्वी	लं
2	स्वाधिष्ठान	त्रिक-क्षेत्र	जल	वं
3	मणिपूर	नाभि	अग्नि	रं
4	अनाहत	हृदय	वायु	यं
5	विशुद्ध	कण्ठ	आकाश	हं
6	आज्ञा	भ्रूमध्य	मन/प्रकाश	ॐ
7	सहस्रार	मूर्धा	चेतना	(निरक्षर)

षट्चक्रनिरूपण में वर्णित है —

“मूलाधारे वह्निशिखामभितो वाग्भवं बीजम्। तत्र स्वयम्भूलिंगमुपरिसितं त्रिवलयं कुण्डलिन्याः॥”

(भावार्थ: मूलाधार चक्र में अग्निशिखा के समान स्वयंभू-लिंग स्थित है, जिसके चारों ओर कुण्डलिनी शक्ति त्रिवलय रूप में लिपटी रहती है) [5]

यह ध्यातव्य है कि चक्र-वर्णन में पंचतत्त्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) का प्रयोग हुआ है — वही पंचतत्त्व जो ज्योतिष में ग्रह-स्वभाव-निर्धारण में भी प्रयुक्त होता है। यही संरचनात्मक समानता (दोनों प्रणालियों में पंचतत्त्व-वर्गीकरण की उपस्थिति) संभवतः

आधुनिक समन्वयवादी साहित्य में ग्रह-चक्र पत्राचार की परिकल्पना का मूल स्रोत प्रतीत होती है — अर्थात् दोनों प्रणालियाँ एक साझा तात्त्विक (पंचतत्त्व) ढाँचे का उपयोग करती हैं, इसलिए इन्हें परस्पर जोड़ना वैचारिक रूप से सरल एवं आकर्षक प्रतीत होता है, भले ही यह जोड़ मूल ग्रंथों में प्रत्यक्षतः उपस्थित न हो।

5.0 सातों चक्रों का विस्तृत स्वरूप

मूलाधार चक्र मेरुदण्ड के मूल में स्थित है और इसे अस्तित्व, सुरक्षा एवं मूल जीवन-शक्ति का केंद्र माना जाता है। इसका सम्बन्ध पृथ्वी-तत्त्व, गंध-इंद्रिय एवं चार दल वाले कमल से है। इसके असंतुलन को भय, असुरक्षा एवं भौतिक अस्थिरता के रूप में वर्णित किया जाता है।

स्वाधिष्ठान चक्र त्रिक-क्षेत्र (sacral region) में स्थित है और इसे रचनात्मकता, कामना एवं भावनात्मक प्रवाह का केंद्र माना जाता है। इसका सम्बन्ध जल-तत्त्व, रस-इंद्रिय एवं छह दल वाले कमल से है।

मणिपूर चक्र नाभि-क्षेत्र में स्थित है और इसे इच्छाशक्ति, आत्मसम्मान एवं व्यक्तिगत शक्ति का केंद्र माना जाता है। इसका सम्बन्ध अग्नि-तत्त्व, दृष्टि-इंद्रिय एवं दस दल वाले कमल से है।

अनाहत चक्र हृदय-क्षेत्र में स्थित है और इसे प्रेम, करुणा एवं संतुलन का केंद्र माना जाता है। इसका सम्बन्ध वायु-तत्त्व, स्पर्श-इंद्रिय एवं बारह दल वाले कमल से है। “अनाहत” शब्द का अर्थ है “अहत ध्वनि” — वह ध्वनि जो बिना किसी भौतिक टकराव के उत्पन्न होती है, जो आंतरिक, अश्रव्य नाद का प्रतीक है।

विशुद्ध चक्र कण्ठ-क्षेत्र में स्थित है और इसे अभिव्यक्ति, सत्य एवं संचार का केंद्र माना जाता है। इसका सम्बन्ध आकाश-तत्त्व, श्रवण-इंद्रिय एवं सोलह दल वाले कमल से है।

आज्ञा चक्र भ्रूमध्य में स्थित है और इसे अंतर्ज्ञान, मानसिक स्पष्टता एवं दिव्य-दृष्टि का केंद्र माना जाता है। इसका सम्बन्ध मन-तत्त्व एवं दो दल वाले कमल से है; इसे प्रायः “तृतीय नेत्र” भी कहा जाता है।

सहस्रार चक्र मूर्धा (कपाल के ऊपरी भाग) में स्थित है और इसे शुद्ध चेतना, आध्यात्मिक जागरण एवं ब्रह्म-एकत्व का केंद्र माना जाता है। इसे सहस्र-दल कमल के रूप में वर्णित किया जाता है, जो समस्त तत्त्वों एवं इंद्रियों से परे, शुद्ध चैतन्य की अवस्था का प्रतीक है।

इन सातों चक्रों का यह विस्तृत विवरण दर्शाता है कि प्रत्येक चक्र एक समृद्ध, आंतरिक रूप से सुसंगत प्रतीक-व्यवस्था (tattva, इंद्रिय, दल-संख्या, बीज-मंत्र) से युक्त है — जो अपने-आप में एक सम्पूर्ण एवं स्वतंत्र शास्त्रीय प्रणाली है, जिसे किसी बाह्य (ग्रह-आधारित) वर्गीकरण की आवश्यकता नहीं। यह तथ्य स्वयं इस बात को पुष्ट करता है कि चक्र-प्रणाली अपने मूल रूप में आत्मनिर्भर (self-contained) है।

5.1 कुण्डलिनी-जागरण की प्रक्रिया एवं उसका शरीरक्रियात्मक सहसंबंध

कुण्डलिनी योग की परम्परा के अनुसार मूलाधार में सुप्त पड़ी कुण्डलिनी-शक्ति, प्राणायाम, आसन एवं ध्यान के सम्मिलित अभ्यास से क्रमशः ऊर्ध्वगामी होकर सुषुम्ना-मार्ग से सहस्रार तक पहुँचती है। घेरण्ड संहिता में इस प्रक्रिया का वर्णन इस प्रकार मिलता है —

“यथा कुञ्चिकया द्वारं दारुजं पिहितं भृशम्। देवी कुण्डलिनी तद्वद्योगद्वारं हि पिधाति॥”

(भावार्थ: जिस प्रकार कुंजी से काष्ठ का द्वार खुलता है, उसी प्रकार कुण्डलिनी-शक्ति योग-मार्ग के द्वार को खोलती है) [5]

कौर एवं अहलूवालिया [12] तथा स्ट्रीटर एवं सहयोगियों [13] के शोध-निष्कर्ष इस प्रक्रिया के **परिणामों** (हृदय-गति-परिवर्तनशीलता में वृद्धि, परानुकंपी तंत्रिका सक्रियता, GABA स्तर में परिवर्तन) को मापनीय ढंग से प्रमाणित करते हैं, परन्तु ये अध्ययन “कुण्डलिनी-शक्ति” नामक किसी विशिष्ट ऊर्जा-सत्ता (energy entity) के अस्तित्व को प्रत्यक्ष रूप से सिद्ध नहीं करते — वे केवल यह प्रदर्शित करते हैं कि योगाभ्यास से जुड़ी शारीरिक क्रियाएँ (गहन श्वसन, मांसपेशीय-विश्राम, ध्यान-केंद्रीकरण) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र में मापनीय परिवर्तन लाती हैं। यह भेद — “अभ्यास-जनित शरीरक्रियात्मक परिणाम” बनाम “ऊर्जा-सत्ता का अस्तित्व” — वैज्ञानिक व्याख्या की दृष्टि से निर्णायक है।

5.2 चक्र-प्रणाली में क्षेत्रीय/सांप्रदायिक विविधता

यह भी उल्लेखनीय है कि चक्र-प्रणाली स्वयं भी एकरूप (monolithic) नहीं है। कश्मीर शैव-परम्परा में कहीं पाँच, कहीं नौ चक्रों का वर्णन मिलता है; बौद्ध तंत्र-परम्परा (वज्रयान) में प्रायः चार अथवा पाँच चक्रों की गणना होती है, जो हिन्दू तांत्रिक सप्त-चक्र प्रणाली से भिन्न है। यह आंतरिक विविधता स्वयं इस तथ्य की पुष्टि करती है कि “चक्र” एक एकल, निश्चित, सार्वभौमिक शरीर-रचनात्मक इकाई नहीं अपितु विभिन्न ध्यान-परम्पराओं द्वारा विकसित भिन्न-भिन्न आंतरिक मानचित्र (internal cartographies) हैं, जिनका प्रयोजन साधना-पद्धति के अनुसार भिन्न रहा है।

6. तुलनात्मक विश्लेषण: प्रचलित ग्रह-चक्र पत्राचार एवं उसका परीक्षण

लोकप्रिय साहित्य में प्रचलित ग्रह-चक्र पत्राचार की सारणी तथा प्रत्येक दावे की शास्त्रीय/वैज्ञानिक सत्यापन-स्थिति तालिका 2 में प्रस्तुत है। यह तालिका इस शोध-पत्र के “विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण” दृष्टिकोण का केंद्रीय योगदान है।

तालिका 2: लोकप्रिय ग्रह-चक्र पत्राचार दावे एवं उनकी शास्त्रीय/वैज्ञानिक सत्यापन-स्थिति

ग्रह	लोकप्रिय साहित्य में प्रचलित सम्बद्ध चक्र	बृहत्पराशर होराशास्त्र में प्रत्यक्ष उल्लेख?	संरचनात्मक/तात्त्विक औचित्य	वैज्ञानिक/अनुभवसिद्ध स्थिति
सूर्य	अनाहत (हृदय)	नहीं	सूर्य=आत्मा/तेज; अनाहत=हृदय-केंद्र — प्रतीकात्मक समानता संभव	असत्यापित; प्रतीकात्मक अनुमान
चन्द्र	स्वाधिष्ठान/आज्ञा (स्रोत-भेद)	नहीं	चन्द्र=मन=जल-तत्त्व; स्वाधिष्ठान=जल-तत्त्व — आंशिक तात्त्विक संगति	असत्यापित; स्रोतों में असंगति स्वयं इसकी अनिश्चितता दर्शाती है
मंगल	मूलाधार	नहीं	मंगल=अग्नि/पराक्रम; मूलाधार परंपरागत रूप से पृथ्वी-तत्त्व — तात्त्विक असंगति	असत्यापित; तात्त्विक विरोधाभास उपस्थित
बुध	विशुद्ध (वाणी)	नहीं	बुध=वाणी का कारक; विशुद्ध=वाणी/कण्ठ-केंद्र — युक्तिसंगत प्रतीकात्मक संगति	असत्यापित किन्तु आंतरिक रूप से संगत रूपक
गुरु	सहस्रार/अनाहत (स्रोत-भेद)	नहीं	गुरु=ज्ञान/विस्तार; सहस्रार=उच्चतम चेतना — प्रतीकात्मक संगति संभव	असत्यापित; स्रोतों में असंगति
शुक्र	स्वाधिष्ठान	नहीं	शुक्र=भोग/सौंदर्य; स्वाधिष्ठान=इंद्रिय-सुख केंद्र — प्रतीकात्मक संगति	असत्यापित किन्तु आंतरिक रूप से संगत रूपक
शनि	मूलाधार	नहीं	शनि=स्थिरता/अनुशासन; मूलाधार=आधार-केंद्र — आंशिक संगति	असत्यापित; मंगल से भी यही सम्बन्ध दावा किया जाता है — आंतरिक विरोधाभास

तालिका 2 से स्पष्ट होता है कि ग्रह-चक्र पत्राचार के विभिन्न स्रोतों में पर्याप्त **आंतरिक असंगति** (internal inconsistency) विद्यमान है — उदाहरणार्थ, मूलाधार चक्र को कहीं मंगल का तो कहीं शनि का “अधिष्ठित चक्र” बताया जाता है, तथा चन्द्र एवं गुरु के संदर्भ में भी स्रोत-भेद पाया जाता है। किसी भी वास्तविक शास्त्रीय अथवा अनुभवसिद्ध प्रणाली में ऐसी आंतरिक असंगति

की अपेक्षा नहीं की जाती — यह असंगति स्वयं इस बात का सुदृढ़ संकेत है कि यह पत्राचार किसी एकल, सुसंगत, प्राचीन स्रोत से नहीं अपितु विविध आधुनिक लेखकों की स्वतंत्र, व्यक्तिपरक (subjective) व्याख्याओं से उद्धृत हुआ है।

6.1 नवग्रहों की संख्यात्मक समस्या

एक अतिरिक्त संरचनात्मक कठिनाई यह है कि होरा ज्योतिष में नौ ग्रह (सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु) स्वीकृत हैं, जबकि चक्र-प्रणाली में सात चक्र वर्णित हैं। संख्यात्मक असंगति को दूर करने हेतु लोकप्रिय साहित्य में विविध युक्तियाँ अपनाई जाती हैं — कुछ लेखक राहु-केतु को छाया-ग्रह मानकर उन्हें चक्र-वर्गीकरण से बाहर रखते हैं; कुछ अन्य गुरु एवं शुक्र को एक ही चक्र (क्रमशः विशुद्ध अथवा अनाहत) से “साझा” सम्बद्ध करते हैं; कुछ लेखक पुनः आठवें एवं नौवें “चक्र” (बिंदु एवं सहस्रार के ऊपर) की कल्पना गढ़ लेते हैं ताकि संख्या नौ तक पहुँचे। यह तदर्थ समायोजन (ad hoc adjustment) की प्रवृत्ति — जिसमें असंगति को दूर करने हेतु प्रत्येक लेखक अपनी सुविधानुसार नई श्रेणी गढ़ लेता है — विज्ञान-दर्शन में “तदर्थ परिकल्पना” (ad hoc hypothesis) की सुपरिचित समस्या से साम्य रखती है, जिसे कार्ल पॉपर सहित अनेक विज्ञान-दार्शनिकों ने किसी सिद्धांत की परीक्षणीयता (falsifiability) को दुर्बल करने वाला माना है।

6.2 राशि-चक्र पत्राचार: एक वैकल्पिक, अधिक सुसंगत मॉडल?

यह ध्यातव्य है कि कुछ अपेक्षाकृत सुसंगत समकालीन लेखक ग्रह की अपेक्षा राशि (बारह राशियों) को चक्रों से जोड़ने का प्रयास करते हैं, प्रायः ज्योतिषीय “त्रिकोण” (fire/earth/air/water रूप में चार तत्त्व-समूह, प्रत्येक में तीन राशियाँ) के माध्यम से। यह मॉडल संख्यात्मक दृष्टि से भी उतना ही असंगत है (12 राशियाँ बनाम 7 चक्र), परन्तु तात्त्विक दृष्टि से (चार तत्त्व-समूह बनाम पंचतत्त्व चक्र-वर्गीकरण) अपेक्षाकृत अधिक सुसंगत प्रतीत होता है, क्योंकि दोनों प्रणालियाँ मूलतः तत्त्व-आधारित वर्गीकरण साझा करती हैं। तथापि, यह मॉडल भी किसी शास्त्रीय मूल ग्रंथ में प्रमाणित नहीं है और इसे भी एक आधुनिक व्याख्यात्मक प्रस्ताव ही माना जाना चाहिए, वास्तविक पत्राचार नहीं।

7. विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण (Analytical Reality Exposing)

7.1 प्रतीकात्मक बनाम कारणात्मक सम्बन्ध

इस शोध का केंद्रीय निष्कर्ष यह है कि ग्रह-चक्र “अंतर्संबंध” को दो भिन्न स्तरों पर समझा जाना आवश्यक है —

(अ) **प्रतीकात्मक-रूपकात्मक स्तर:** दोनों प्रणालियाँ पंचतत्त्व-वर्गीकरण, मनोदैहिक कारकत्व, एवं चेतना के स्तरीकरण (stratification of consciousness) जैसी साझा वैचारिक संरचनाओं का उपयोग करती हैं। इस अर्थ में, ग्रह एवं चक्र दोनों “समान भाषा” (same symbolic grammar) में मानव-अनुभव के विभिन्न आयामों — भावना, वाणी, इच्छाशक्ति, कामना, अनुशासन — का वर्णन करने के उपकरण (heuristic tools) हैं। इस स्तर पर, ग्रह-चक्र पत्राचार एक **उपयोगी ध्यान-साधना अथवा आत्म-विश्लेषण ढाँचा** हो सकता है — जैसे किसी साधक के लिए “शनि-प्रधान मूलाधार असंतुलन” की कल्पना आत्म-चिंतन हेतु प्रेरक रूपक सिद्ध हो सकती है।

(ब) **कारणात्मक-भौतिक स्तर:** यदि यह दावा किया जाए कि आकाश में स्थित किसी ग्रह की स्थिति प्रत्यक्ष भौतिक कारण-तंत्र (causal mechanism) द्वारा शरीर के किसी विशिष्ट ऊर्जा-केंद्र को “सक्रिय” अथवा “अवरुद्ध” करती है, तो यह दावा अनुभवसिद्ध सत्यापन की माँग करता है। उपलब्ध साक्ष्य (कार्लसन 1985 [23]; डीन व केली 2003 [24]) के अनुसार ज्योतिषीय कारकत्व का सांख्यिकीय सत्यापन अब तक संभव नहीं हो सका है, और न ही किसी समकक्ष-समीक्षित अध्ययन में ग्रह-स्थिति तथा मानव तंत्रिका-अंतःस्रावी गतिविधि के मध्य प्रत्यक्ष कारणात्मक सम्बन्ध प्रदर्शित किया गया है।

7.2 यह असंगति क्यों महत्वपूर्ण है

तालिका 2 में प्रदर्शित आंतरिक असंगति (एक ही चक्र को भिन्न-भिन्न ग्रहों से जोड़ा जाना) वैज्ञानिक कसौटी की दृष्टि से अत्यंत सूचक है। किसी वास्तविक अनुभवसिद्ध तंत्र में यह अपेक्षा की जाती है कि स्वतंत्र स्रोत समान परिणाम पर पहुँचें (replication/convergence)। इसके विपरीत, यहाँ स्रोत-भेद स्वयं यह प्रमाणित करता है कि यह “पत्राचार” किसी मौलिक अन्वेषण से नहीं अपितु प्रत्येक लेखक की व्यक्तिगत अंतर्ज्ञान (intuition) अथवा सौंदर्यात्मक वरीयता (aesthetic preference) से उपजा है।

7.3 फिर भी इसका सांस्कृतिक मूल्य

यह निष्कर्ष यह अर्थ कदापि नहीं रखता कि ज्योतिष अथवा चक्र-परम्परा “निरर्थक” है। कौर एवं अहलूवालिया (2025) के यौगिक-निद्रा अध्ययन [19] तथा स्ट्रीटर एवं सहयोगियों (2012) के स्वायत्त-तंत्र अध्ययन [13] स्पष्ट करते हैं कि योगाभ्यास (जिसे परम्परागत रूप से “चक्र-जागरण” कहा जाता है) के मापनीय शरीर-क्रियात्मक परिणाम अवश्य होते हैं — जैसे परानुकंपी सक्रियता, हृदय-गति-परिवर्तनशीलता में सुधार, तथा मस्तिष्क-तरंग पैटर्न में परिवर्तन। अतः **योगाभ्यास का प्रभाव वास्तविक एवं मापनीय है, भले ही उसकी परम्परागत “चक्र” व्याख्या रूपकात्मक हो।** समान रूप से, ज्योतिष का सांस्कृतिक-मनोवैज्ञानिक महत्त्व (आत्म-चिंतन, निर्णय-सामर्थ्य, सांत्वना) डीन व केली [24] के अनुसार भी पृथक् रूप से मूल्यवान हो सकता है, भले ही उसकी भविष्यवाणी-क्षमता सांख्यिकीय रूप से असिद्ध रही हो।

7.4 बार्नम प्रभाव एवं आत्म-व्याख्यात्मक तंत्र

मनोविज्ञान में “बार्नम प्रभाव” (Barnum/Forer effect) एक सुस्थापित परिघटना है, जिसके अनुसार सामान्य, अस्पष्ट एवं व्यापक रूप से लागू होने वाले व्यक्तित्व-विवरण (जैसे “आप कभी-कभी अंतर्मुखी होते हैं, परन्तु अवसर आने पर बहिर्मुखी भी बन सकते हैं”) अधिकांश व्यक्तियों को व्यक्तिगत रूप से सटीक प्रतीत होते हैं, भले ही वे किसी के भी लिए समान रूप से लागू हों। ग्रह-चक्र पत्राचार जैसे दावे — जैसे “आपके शनि की स्थिति आपके मूलाधार चक्र में असंतुलन उत्पन्न कर रही है” — संरचनात्मक रूप से बार्नम-शैली के कथन से साम्य रखते हैं, क्योंकि “असंतुलन” एक अस्पष्ट, व्यापक रूप से अनुभवजन्य (vague, universally relatable) अवधारणा है जिसे लगभग किसी भी व्यक्ति के जीवन में किसी न किसी रूप में “सत्यापित” किया जा सकता है। यह मनोवैज्ञानिक तंत्र यह स्पष्ट करने में सहायक है कि क्यों ऐसे दावे व्यक्तिगत अनुभव के स्तर पर प्रायः “सही” प्रतीत होते हैं, भले ही वे नियंत्रित परीक्षण में सांख्यिकीय सत्यापन से वंचित रहें — यह अंतर “आत्मगत प्रामाणिकता” (subjective validation) एवं “वस्तुगत सत्यापन” (objective verification) के मध्य के भेद को रेखांकित करता है, जो इस शोध-पत्र के समग्र तर्क-ढाँचे का एक केंद्रीय स्तंभ है।

7.5 प्रस्तावित त्रि-स्तरीय व्याख्या-मॉडल

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह शोध-पत्र ग्रह-चक्र अंतर्संबंध की व्याख्या हेतु एक त्रि-स्तरीय मॉडल प्रस्तावित करता है —

- **स्तर 1 — दार्शनिक-तात्त्विक एकता:** दोनों प्रणालियाँ पंचतत्त्व एवं पिण्ड-ब्रह्माण्ड साम्य के साझा भारतीय दार्शनिक अधिष्ठान से उद्भूत हैं। इस स्तर पर इनकी तुलना वैध एवं अर्थपूर्ण है।
- **स्तर 2 — अभ्यासगत-मनोवैज्ञानिक उपयोगिता:** ध्यान, आत्म-चिंतन एवं परामर्श के प्रसंग में, ग्रह-चक्र रूपक एक उपयोगी हेयुरिस्टिक उपकरण हो सकता है, बशर्ते इसे “रूपक” के रूप में ही प्रस्तुत किया जाए, “सिद्ध तथ्य” के रूप में नहीं।
- **स्तर 3 — अनुभवसिद्ध-कारणात्मक दावा:** जब यह कहा जाता है कि आकाशीय ग्रह-स्थिति भौतिक कारण-तंत्र द्वारा शरीर के विशिष्ट ऊर्जा-केंद्र को प्रत्यक्षतः नियंत्रित करती है, तो यह दावा वर्तमान वैज्ञानिक साक्ष्य के आलोक में अपुष्ट (unsupported) है, और इसे इसी रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिए।

यह त्रि-स्तरीय मॉडल इस शोध-पत्र का मौलिक सैद्धांतिक योगदान है, जो भविष्य के शोधकर्ताओं को समान प्रकृति के अन्य

परम्परागत-आधुनिक “समन्वय दावों” के विश्लेषण हेतु भी एक पुनरुपयोज्य (reusable) ढाँचा प्रदान कर सकता है।

8. चर्चा (Discussion)

प्रस्तुत विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि “होरा ज्योतिष में ग्रहों के आधिपत्य और मानव ऊर्जा चक्र के अंतर्संबंध” को तीन पृथक् स्तरों पर विभाजित करके समझा जाना चाहिए — ऐतिहासिक-शास्त्रीय स्तर, प्रतीकात्मक-व्याख्यात्मक स्तर, और अनुभवसिद्ध-वैज्ञानिक स्तर। ऐतिहासिक दृष्टि से, दोनों प्रणालियाँ स्वतंत्र उद्गम रखती हैं [1,6,9]; प्रतीकात्मक दृष्टि से, साझा पंचतत्त्व-ढाँचे के कारण एक आकर्षक किन्तु अस्थिर समन्वय संभव है [10,11]; तथा अनुभवसिद्ध दृष्टि से, प्रत्यक्ष कारणात्मक पत्राचार अद्यतन असत्यापित है [23,24]।

यह निष्कर्ष भारतीय ज्ञान-परम्पराओं के अकादमिक अध्ययन हेतु एक व्यापक पद्धतिगत सबक प्रस्तुत करता है — अर्थात् परम्परागत ज्ञान-प्रणालियों का सम्मानपूर्वक अध्ययन करते समय भी, उनके आंतरिक स्रोतों, ऐतिहासिक विकास, एवं समकालीन पुनर्व्याख्याओं के मध्य स्पष्ट भेद बनाए रखना आवश्यक है। “प्राचीनता” का दावा स्वयं में प्रामाणिकता का प्रमाण नहीं है, जैसा कि व्हाइट [9] तथा कौर व अहलूवालिया [20] दोनों के अध्ययन पृष्ठ करते हैं।

8.1 भावी शोध हेतु सुझाव

- ग्रह-दशा काल एवं योगाभ्यास-जनित शरीर-क्रियात्मक मापदंडों (HRV, EEG, कॉर्टिसोल स्तर) के मध्य सहसंबंध का नियंत्रित अनुदैर्घ्य (longitudinal controlled) अध्ययन।
- विभिन्न ज्योतिषीय/तांत्रिक सम्प्रदायों में प्रचलित ग्रह-चक्र पत्राचार की स्रोत-आधारित तुलनात्मक सूचीकरण (taxonomy), ताकि इसके ऐतिहासिक उद्गम-बिंदु अधिक स्पष्टता से चिह्नित किए जा सकें।
- ज्योतिषीय विश्वास-प्रणाली के मनोवैज्ञानिक प्रभाव (आत्म-प्रत्यक्षीकरण, निर्णय-क्षमता पर प्रभाव) का पृथक् अनुभवसिद्ध अध्ययन, जो ज्योतिष की भविष्यकथन-वैधता के प्रश्न से पृथक् रखा जाए।
- भारतीय ज्ञान-परम्पराओं (Indian Knowledge Systems — IKS) की अकादमिक समीक्षा हेतु एक मानकीकृत पद्धतिगत प्रोटोकॉल का विकास, जिसमें प्रत्येक दावे को अनिवार्यतः (क) मूल-ग्रंथ-सत्यापन, (ख) ऐतिहासिक उद्गम-अन्वेषण, तथा (ग) समकालीन अनुभवसिद्ध परीक्षण — इन तीनों चरणों से गुजरना अनिवार्य हो।
- थियोसॉफिकल एवं पाश्चात्य गूढ़-साहित्य (19वीं-20वीं शताब्दी) का ग्रंथसूचीय अभिलेखीय अध्ययन (archival bibliographic study), ताकि खंड 2.5 में प्रस्तावित “पाश्चात्य-गूढ़ात्मक संश्लेषण परिकल्पना” का प्रत्यक्ष दस्तावेजीय सत्यापन किया जा सके।

8.2 व्यावहारिक निहितार्थ (Practical Implications)

इस अध्ययन के निष्कर्षों के व्यावहारिक स्तर पर भी निहितार्थ हैं। परामर्शदाताओं, योग-प्रशिक्षकों एवं ज्योतिषियों हेतु यह सुझाव दिया जाता है कि यदि वे ग्रह-चक्र रूपक का प्रयोग परामर्श अथवा शिक्षण में करते हैं, तो इसे स्पष्ट रूप से “व्याख्यात्मक उपकरण” अथवा “ध्यान हेतु रूपक” के रूप में प्रस्तुत करें, न कि “सिद्ध वैज्ञानिक तथ्य” के रूप में। यह पारदर्शिता न केवल अकादमिक निष्ठा की माँग है, अपितु ग्राहकों/शिष्यों के साथ नैतिक व्यवहार की भी माँग है, विशेषतः ऐसे प्रसंगों में जहाँ व्यक्ति स्वास्थ्य अथवा महत्वपूर्ण जीवन-निर्णयों हेतु इन परामर्शों पर निर्भर हो सकते हैं।

9. निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत शोध-पत्र ने “होरा ज्योतिष में ग्रहों के आधिपत्य और मानव ऊर्जा चक्र के अंतर्संबंध” के दावे का शास्त्रीय, तुलनात्मक एवं वैज्ञानिक साहित्य के आलोक में विश्लेषणात्मक यथार्थ-अन्वेषण प्रस्तुत किया है। अध्ययन के निष्कर्ष निम्नलिखित हैं —

- बृहत्पराशर होराशास्त्र सहित प्रमुख शास्त्रीय ज्योतिष-ग्रंथों में ग्रह-चक्र पत्राचार का कोई प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता; ग्रहाधिपत्य एवं चक्र — दोनों पृथक्, स्वतंत्र शास्त्र-परम्पराओं से उद्भूत हैं।
- लोकप्रिय साहित्य में प्रचलित ग्रह-चक्र पत्राचार आंतरिक रूप से असंगत है (एक ही चक्र को भिन्न ग्रहों से जोड़ा जाना), जो इसके आधुनिक, गैर-व्यवस्थित (non-systematic) उद्गम का सुदृढ़ प्रमाण है।
- साझा पंचतत्त्व-वर्गीकरण के कारण दोनों प्रणालियों में एक सीमित प्रतीकात्मक/रूपकात्मक संगति अवश्य विद्यमान है, जो आत्म-चिंतन एवं ध्यान-साधना हेतु उपयोगी हो सकती है।
- नियंत्रित वैज्ञानिक अध्ययनों में ज्योतिषीय भविष्यकथन-वैधता सांख्यिकीय रूप से असिद्ध रही है, जबकि योगाभ्यास (जिसे परम्परागत रूप से “चक्र-जागरण” कहा जाता है) के स्वायत्त तंत्रिका तंत्र पर मापनीय, पुनरुत्पादनीय प्रभाव के प्रमाण उपलब्ध हैं।

अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि ग्रह-चक्र अंतर्संबंध को एक **सांस्कृतिक-प्रतीकात्मक संश्लेषण** के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए — जो आध्यात्मिक साधना एवं आत्म-विश्लेषण हेतु अर्थपूर्ण हो सकता है — न कि एक अनुभवसिद्ध रूप से प्रमाणित भौतिक कारण-तंत्र के रूप में। भविष्य के शोध को इस भेद को स्पष्ट रखते हुए ही दोनों परम्पराओं का सम्मानजनक एवं निष्पक्ष अध्ययन करना चाहिए।

संदर्भ सूची (References)

1. Pingree D. *Jyotiḥśāstra: Astral and Mathematical Literature*. Wiesbaden: Otto Harrassowitz; 1981.
2. Santhanam R, translator. *Brihat Parashara Hora Shastra of Maharshi Parashara*. New Delhi: Ranjan Publications; 1984.
3. Rath S. *Crux of Vedic Astrology: Timing of Events*. New Delhi: Sagar Publications; 1996.
4. Behari B. *Fundamentals of Vedic Astrology*. New Delhi: Sagar Publications; 2003.
5. Purnananda Swami. *Shat-Chakra-Nirupana*. (Woodroffe A, translator, as part of *The Serpent Power*.) Madras: Ganesh & Co.; 1919 (reprint editions through 2000s).
6. Eliade M. *Yoga: Immortality and Freedom*. Princeton: Princeton University Press; 1958.
7. Taimni IK. *The Science of Yoga*. Adyar: Theosophical Publishing House; 1961.
8. Feuerstein G. *The Yoga Tradition: Its History, Literature, Philosophy and Practice*. Prescott (AZ): Hohm Press; 1998.
9. White DG. *Sinister Yogis*. Chicago: University of Chicago Press; 2009.
10. Jamwal R, Ahluwalia PS. The Chakra System: Traditional Energy Mapping and Contemporary Understanding. *Sanatanodaya*. 2025;260-274.
11. Bharti K, Ahluwalia PS. Sacred Geometry in Traditional Yoga Practices: Mandala, Yantra, and Asana. *Sanatanodaya*. 2025;77-94.
12. Kaur A, Ahluwalia PS. The Vagus Nerve and Yoga: Parasympathetic Activation Through Practice. *Sanatanodaya*. 2025;358-366.
13. Streeter CC, Gerbarg PL, Saper RB, Ciraulo DA, Brown RP. Effects of yoga on the autonomic nervous system, gamma-aminobutyric-acid, and allostasis. *Med Hypotheses*. 2012;78(5):571-579.
14. Gupta S, Ahluwalia PS. Pranayama in Classical Texts: Comparative Analysis of Breathing Techniques Across Traditions. *Sanatanodaya*. 2025;95-104.

15. Sharma P, Ahluwalia PS. Ayurveda and Yoga: Integrating Constitutional Types with Yogic Practices. Sanatanodaya. 2025:204-213.
16. Singh G, Ahluwalia PS. Vedantic Foundations of Yoga: Exploring the Philosophical Underpinnings of Union. Sanatanodaya. 2025:38-52.
17. Kaur R, Ahluwalia PS. Samkhya Philosophy and Yoga: Understanding the Metaphysical Framework. Sanatanodaya. 2025:53-61.
18. Kaur S, Ahluwalia PS. The Eight Limbs of Yoga: Contemporary Interpretations of Ashtanga Framework. Sanatanodaya. 2025:105-123.
19. Kaur R (Rajwinder), Ahluwalia PS. Yoga Nidra: Ancient Sleep Practices and Modern Consciousness Research. Sanatanodaya. 2025:275-285.
20. Kaur B, Ahluwalia PS. The Evolution of Hatha Yoga: From Tantric Origins to Global Phenomenon. Sanatanodaya. 2025:24-37.
21. Kaur M, Ahluwalia PS. Yoga and Telomere Length: Exploring Anti-Aging Effects at Cellular Level. Sanatanodaya. 2025:367-378.
22. Ahluwalia PS. पातंजल योगसूत्र में चित्तवृत्ति निरोध का सैद्धांतिक विश्लेषण. शब्दसागर. 2026:26-41.
23. Carlson S. A double-blind test of astrology. Nature. 1985;318(6045):419-425.
24. Dean G, Kelly IW. Is astrology relevant to consciousness and psi? J Conscious Stud. 2003;10(6-7):175-198.
25. Abbott A. Indian universities criticised over astrology degrees. Nature. 2001;412(6848):664.